वर्ष 7, अंक 1

ISSN 2456-3838

पिक्चर प्लस

ज़िन्दगी का बायस्कोप

अगस्त, 2023 ₹ 65

CBFC / OTT

अनसेंसर्ड !

ISSN 2456 - 3838
Licence N. F2(P19) PRESS 2016

पिक्चर प्लस

वर्ष-7, अंक-1, अगस्त, 2023
मासिक, द्विभाषिक/हिंदी-अंग्रेजी

संपादक
संजीव श्रीवास्तव

संपादन सहयोग
कल्पना कुमारी

कवर डिजाइन
ज़ाहिद मोहम्मद खान

लेआउट डिजाइन
शाश्वती

पंजीकृत पता
37/ए, तीसरी मंज़िल, गली नंबर 2
प्रताप नगर, मयूर विहार
फेज -1, दिल्ली - 110091

मूल्य- 65 रुपये (एक प्रति)
वार्षिक - 1,000 रुपये (व्यक्तिगत)
5,000 रुपये (संस्थागत)

पत्रिका के डिजिटल संस्करण नॉटनल
(www.Notnul.com) से खरीद सकते हैं।
संपर्क - 9313677771
Email: pictureplus2016@gmail.com

नोट : सभी रचनाओं में व्यक्त विचारों से पत्रिका की संपादकीय नीति, राजनीतिक विचारधारा तथा लेखक, प्रकाशक की सहमति आवश्यक नहीं। पत्रिका के किसी भी पक्ष से संबंधित कानूनी निपटारे का न्यायिक क्षेत्र दिल्ली होगा।

(चित्र इंटरनेट से साभार व सभी पद अवैतनिक)

अनुक्रम

05. संपादकीय : चलती का नाम गाड़ी :
06. अरविंद कुमार : 'माधुरी' के वे दिन - बॉलीवुड में भी मुहावरा चलता है-'ख़ुदा मेहरबान तो गधा पहलवान'
08. शरद दत्त - छोटी-सी ये ज़िंदगानी रे...(मुकेश जन्मशती)
सेंसर और सवाल (कवर स्टोरी) :-
11. जवरीमल्ल पारख - फ़िल्मों को सेंसर की जरूरत क्या है?
16. सुरेश उनियाल- रंगाचारियर कमेटी की रिपोर्ट और भारत में फिल्मों में सेंसर की शुरुआत
सेंसर संवाद - आयोजक - दीप भट्ट
20. कुलभूषण खरबंदा - "बोर्ड को विचारों से डर लगता है"
21. पहलाज निहलानी -"जिसकी सरकार, उसका सेंसर बोर्ड"
23. दीप्ति नवल -"फिल्मकार को विषय चुनने का अधिकार है"
24. असीम सिन्हा -"जनभावनाओं का ख्याल रखा जाना भी जरूरी है"
25. दयाल निहलानी- सेंसर बोर्ड किसी को फिल्म बनाने से नहीं रोकता"
27. महेश भट्ट - महज सुझाव से ही सरकार दहल गई!
28. डॉ मनीष जैसल - ओटीटी प्लेटफॉर्म और फ़िल्म सेंसरशिप : समझ विकसित करने की एक कोशिश
34. अजय ब्रह्मात्मज (सिनेमाहौल) - साहित्य-सिनेमा का नया प्रवाह
36. विवेक रंजन अग्निहोत्री -बॉलीवुड में जमींदारी प्रथा-सी चल रही है
38. प्रकाश हिन्दुस्तानी - सजन रे झूठ मत बोलो...जीवन दर्शन का गीत
40. जयनारायण प्रसाद -'शोले' देखकर क्या बोले सत्यजित राय?
44. विवेक शुक्ला -कनॉट प्लेस में कहां देखें फिल्म?
48. पुस्तक प्लस - अपनी गायकी से जग जीतने वाले की कहानी
50. विनोद तिवारी - कॉमेडी, सेक्स, एक्शन...
54. रश्मि संजय श्रीवास्तव- आग़ाज़ (कथा-पटकथा)
Hollywood Plus

स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक संजीव श्रीवास्तव द्वारा 37-ए, गली नं, 2, प्रताप नगर, मयूर विहार, फेज-1, दिल्ली-110091 से प्रकाशित। संपादक - संजीव श्रीवास्तव। चंद्रशेखर प्रिंटर्स, WZ / 439, नारायणा विलेज, नई दिल्ली - 110026 से मुद्रित।

आपका खत मिला

यादगार अंक बन पड़ा है

जुलाई अंक में सबसे पहले तो अरविंद जी द्वारा रचे 9 अक्तूबर के प्राणभूत-दृश्यांकन की धुंध को समझने और फिर ओझाजी की गुरुदत्त की दुविधा को सीन दर सीन समझाने की कारीगरी को सहज ही आत्मसात किया। पाया- गुरुदत्त आज भी एक उपेक्षित महानायक है, जिसकी हर नये कोण से खोज अपेक्षित है। यह खोज आपको मेरी पुस्तक 'सिनेमा का जादुई सफ़र' में भी कभी पढ़ने पर अनिवार्य महसूस होगी। यहां उसका जिक्र इसलिए कि गुरुदत्त मेरे लिए भी...हिंदी सिनेमा के भिन्न महानायक के रूप में 'प्यासा' और 'कागज के फूल' के साथ ही-'चौहदवीं का चांद' हो या 'साहिब, बीबी और गुलाम' में भी गहन आत्म-साक्षात्कार का विषय रहे हैं। विस्तार से नहीं, पर जितना जान पाया उनकी द्रष्टा के रूप में आत्महंता-शक्ति को और सामाजिक सरोकारों के छल-कपट से विद्रोह की उनकी आंतरिक-वृति को समझने की कोशिश की। श्रीयुत अरुण खोपकर, इकबाल मसूद, ब्रजेश्वर मदान और नसरीन मुन्नी कबीर, प्रहलाद अग्रवालजी के 'फ्रेम' में भी गुरु का परिलक्षित होना, खूब देखा। सबके सोच के अपने दायरे और शिखर हैं। उनके निष्कर्ष और गुणसूत्र भी खास अहमियत रखते हैं। पर परदे पर 'कागज के फूल' और 'प्यासा' के इस शिखर-पुरुष का पिगमेलियन-प्रेम क्या कहना चाहता था? इसकी टोह शायद बाकी है! इतना ही सुन्दर है यह अंक! सम्पादक की दृष्टि और लेखकीय-विवेक दोनों ने इसे एक नया आकाश दिया है।

प्रताप सिंह, गाजियाबाद।

सुंदर अंक, हेमंत कुमार पर अच्छा लेख

आदरणीय लेखक श्री चंद्र प्रकाश माथुर जी और संपादक श्री संजीव श्रीवास्तव जी आप दोनों को बहुत-बहुत बधाई इतना शानदार अंक निकलने के लिए। जून अंक में प्रकाशित संगीत के जादूगर-हेमंत कुमार पर आर्टिकल बहुत पसंद आया। ईश्वर की आवाज हेमंत कुमार की आवाज (God of Voice) ऐसा लगता है मंदिर में घंटियां बज रही है। यह अनुभूति सदा होती है। आपने हेमंत कुमार के इतिहास पर जो फोकस डाला वो सराहनीय है। देव आनंद की आवाज बने ये अपना दिल आवारा है (सोलवां साल) आज भी चिरतरुण है। मुझे इस बात की बहुत खुशी हुई जब आपने आर्टिकल में हेमंत कुमार के संगीत निर्देशन में गाये किशोर कुमार के गीतों को शामिल किया। 1) हवाओं पे लिख दूं (दो दुनी चार), 2) एक दिन भी हमारी भी दाल गलेगी (बंदी), 3) कश्ती का खामोश सफर है (गर्लफ्रेंड), 4). ओ मैडम कम कम (गर्ल फ्रेंड), 5). वो शाम कुछ अजीब थी (खामोशी)। आदरणीय श्री चंद्र प्रकाश माथुर साब आपका यह लेख पढ़कर काफी जानकारी मुझे मिल गयी। आपसे अनुरोध है ऐसे ही पठनीय आर्टिकल नियमित निकालते रहें।

विनायक धनेश्वर, नाशिक

आपका हर अंक दिल जीत लेता है

पिक्चर प्लस मासिक का हर नया अंक हम फिल्म प्रेमियों के लिए एक विशेषांक के समान होता है। हर अंक में प्रकाशित आलेख हमें भारतीय सिनेमा के अतीत से परिचय करता है। इसके लिए हम आपका और आपके सम्पादकीय विभाग के आभारी हैं। पिक्चर प्लस के जून 2023 के अंक में आपने संगीतकार हेमंत कुमार के जन्मदिन के अवसर पर बहुत ही सुन्दर जानकारी युक्त 'संगीत के जादूगर-हेमंत कुमार' (लेखक-चन्द्र प्रकाश माथुर "चन्द्र") आलेख प्रकाशित किया। वे मेरे प्रिय संगीतकार हैं, बहुत अच्छा आलेख था। कृपया इस प्रकार के आलेख आगामी अंकों में भी देते रहें। पत्रिका प्रगति पथ पर अग्रसर होती रहे, यही कामना है।

चन्द्र मोहन अग्रवाल, देहरादून

बहुत रोचक और आकर्षक अंक

करीब ढाई माह के बेंगलुरु प्रवास के उपरांत घर लौटने पर आपके द्वारा प्रेषित पिक्चर प्लस के जून और जुलाई अंक पाकर प्रसन्नता हुई। दोनों अंक का कलेवर आकर्षक और रोचक बन पड़ा है।

पुनः आभार।

विनोद नागर, भोपाल।

“हमारे पास पाठक हैं”

पिक्चर प्लस पढ़ने वाले ज्यादातर मित्र यह कह कर हमारा उत्साहवर्धन करते हैं कि यहां उन्हें वैसी सामग्रियां पढ़ने को मिलती हैं जो बड़े व्यावसायिक मीडिया घरानों की पत्रिकाओं या फिर समाचार पत्र में पढ़ने को नहीं मिलतीं, जबकि वो ज्यादा समर्थ हैं। वो चाहें तो ऐसी पत्रिका खुद भी निकाल सकते हैं। लेकिन हिम्मत नहीं करना चाहते। आखिर इसकी क्या वजह है? मैं उन मित्रों को शुक्रिया अदा करना चाहता हूं जो हमारे प्रति और पिक्चर प्लस के प्रति ऐसी सकारात्मक सोच रखते हैं। लेकिन उनकी बात कुछ हद तक सही भी है। बड़े व्यावसायिक मीडिया घरानों की आर्थिक क्षमता, इंफ्रास्ट्रक्चर और नेटवर्क के आगे हमारी कोई बिसात नहीं। वहां कॉरपोरेट्स और रेड कार्पेट है और हम पगडंडी पर चल अकेला...के जज़्बाती गीतकार। जो वो कर सकते हैं हम उसे कभी नहीं कर सकते। लेकिन जो हम कर सकते हैं या हमारे जैसे कुछ लोग जो कर रहे हैं उसे वो क्यों नहीं कर सकते, या करना नहीं चाहते? यह एक बड़ा सवाल है।

मुझे याद आता है हमारे मार्गदर्शक श्रद्धेय शरद दत्त जी ने कहा था-किसी भी तरह की पहल या प्रकाशन के पीछे बड़े व्यावसायिक घरानों के बड़े मकसद छिपे होते हैं। वह इंदौर या चंडीगढ़ में अपना संस्करण इसलिए शुरू करना चाहता है कि क्योंकि वह उसके माध्यम से वहां के पॉवर और प्रॉपर्टी में भी अपनी पैठ बनाना चाहता है। सफलता मिलती है तो मकसद सिद्ध होने तक प्रकाशन जारी रहता है और विफलता मिलती है तो घाटे का बहाना बनाकर प्रकाशन बंद कर दिया जाता है। उन्होंने कैसी सामग्री दी और उसके कितने पाठक मिले या नहीं-इससे उनका कोई वास्ता नहीं होता। उनका लक्ष्य दो और दो पांच नहीं बल्कि दो और दो दस हो गया है। मतलब कि अगर उन्होंने एक करोड़ बिज़नेस में लगाया तो अगले कुछ महीने में उसके बदले पचास करोड़ की कमाई नहीं हुई तो सौदा घाटे का। एक करोड़ लगाकर पांच-दस करोड़ कमाना भी कोई कमाना है। मतलब बाजार ठंडा है।

पिक्चर प्लस या इसकी तरह की अन्य पहल का इतना बड़ा मकसद कत्तई नहीं होता। जुनून इसका पॉवर है, जज़्बात इसकी प्रॉपर्टी और पाठकों की प्रशंसा इसका रिटर्न। दूसरी बात कि मीडिया घरानों की नई पीढ़ी को विचारों से डर लगता है। अक्सर बातों ही बातों में हमारे वरिष्ठ साथी-फिल्म पत्रकार दीप भट्ट कहते हैं – नई पीढ़ी के मालिकानों के भीचर विचारों को लेकर एक प्रकार का संशय रहता है। उन्हें यह बात हमेशा परेशान करती रहती है कि हमारी पूंजी पर पलने वाला हमारे ही प्लेटफॉर्म पर अपने विचारों में हमें ही निशाना साधते हैं। आखिर यह कैसे सहनीय हो सकता है। मीडिया घरानों के सम्मानीय संस्थापकों की पीढ़ी ने विचारों की अलख जगाने के लिए कभी प्रकाशन प्रारंभ किया था लेकिन उन घरानों की नई पीढ़ी को अब विचारों से ही परहेज है। ऐसे में बड़ा सवाल यही है कि जो पिक्चर प्लस के पन्नों पर प्रकाशित होता है-वह उनके यहां के पन्नों पर कैसे नजर आ सकता है।

मित्रो, हमने हमेशा देखा है बड़े मीडिया घराने फिल्म पत्रकारिता को थाली की चटनी मानते हैं, उनकी राय में फिल्म पत्रकारिता में संपादकीय दक्षता की जरूरत नहीं। जबकि हमारा मानना है फिल्म पत्रकारिता अपने आप में पूरी थाली है। यहां कौन सा व्यंजन याकि विषय नहीं है।

मित्रो, आप सबके सहयोग से मैं पिक्चर प्लस के पन्नों पर पूरी थाली परोसना चाहता हूं। इसे ज़िंदगी का बायस्कोप टैग लाइन यूं ही नहीं दिया गया है। सिनेमा में वह सबकुछ शामिल है जो समाज में होता है। इसलिए फिल्म पत्रकारिता पूरी की पूरी थाली है केवल चटनी नहीं। हां, हमारे पास संसाधनों की कमी जरूर है लेकिन हम इरादों के अमीर हैं।

इस अंक के साथ पिक्चर प्लस प्रकाशन के नये वर्ष में प्रवेश कर गया है। यह आप सबके सहयोग और स्नेह का नतीजा है। नया अंक केंद्रीय फिल्म प्रमाणन बोर्ड के विराधाभासी फैसलों पर केंद्रित है। विद्वान लेखकों, समीक्षकों और फिल्म कलाकारों ने अपनी-अपनी राय व्यक्त की है। उनका आभार। अपना फीडबैक दीजिएगा।

सादर।

आपका संपादक

संजीव श्रीवास्तव

बॉलीवुड में भी मुहावरा चलता है- 'ख़ुदा मेहरबान तो गधा पहलवान'

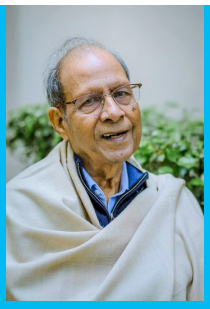

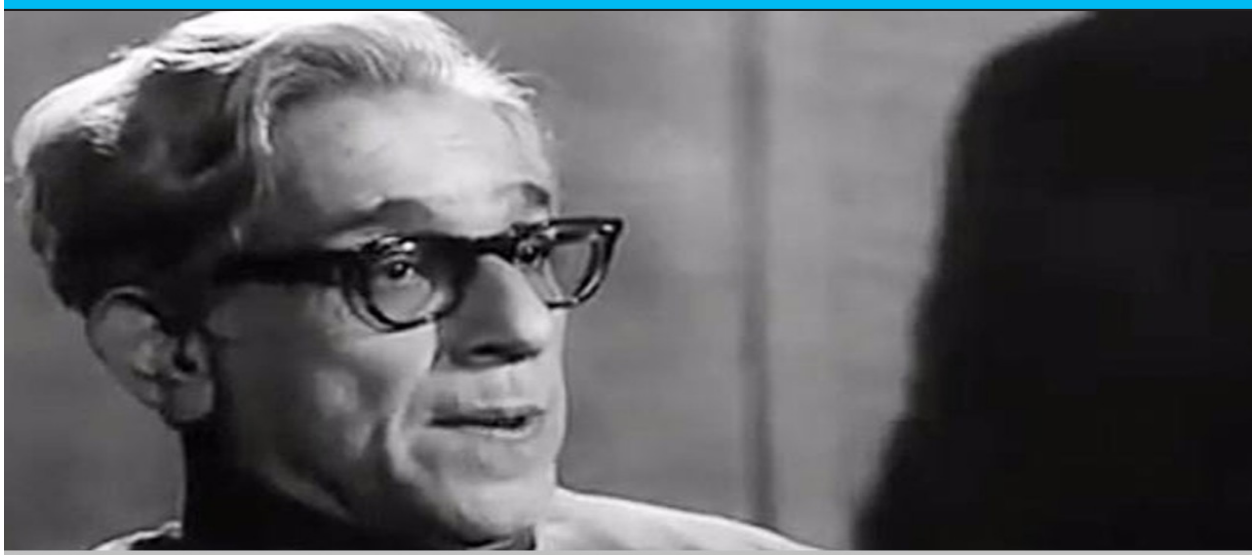

जुहू का रेतीला सागर तट। नवंबर-दिसंबर सन् 1963 की कोई शाम। लगभग रात 8-9 बजे। सुहानी स्फूर्ति भरने वाली समुद्री हवा। रौनक।

मेरी पहली यादगार मुलाक़ात। किसी रेस्तरां की मेज पर एक प्रभावशाली आदमी। मेरे साथ जो थे, वह ठिठके। मैं पहचानता नहीं था, मेरे साथी ने परिचय कराया। हरिन्द्रनाथ चट्टोपाध्याय। मैं उनके अर्द्धराजनीतिक जीवन से परिचित था। नाटककार, लेखक और कवि के रूप में उन्हें जानता था। यह भी जानता था कि वह स्वतंत्रता संग्राम की प्रमुख सेनानी कवियित्री भारत कोकिला सरोजिनी नायडू के छोटे भाई हैं। उन्होंने बड़े प्यार से सामने बैठाया। मेरे चेहरे पर जो हर्ष, प्रशंसा, ख़ुशक़िस्मती का भाव था–वह साफ़ था। फ़िल्मों में उनके काम के बारे में मैं पूरी तरह अनजान था, जबकि वह गुरुदत्त की 'साहब बीबी और ग़ुलाम' (1962) में घड़ी बाबू, 1963 की देव आनंद की 'तेरे घर के सामने' में सेठ करमचंद और इस्माइल मर्चेंट की 'घरबार (द हाउस होल्डर)' में मिस्टर चड्ढा बन चुके थे।

मैं यूं ही पूछ बैठा,"आजकल क्या कर रहे हैं?" मेरा मतलब था आजकल क्या लिख पढ़ रहे हैं। उन्होंने मतलब फ़िल्मों में काम से लगाया, कहा, "आजकल वक़्त ख़राब चल रहा है।" मैं चौंका। अचकचाया। अविश्वास से, उलाहने के स्वर में बोला,"दिल्ली में आप की 'सूर्य अस्त हो गया गीत गगन मस्त हो गया' सुनते गुनगुनाते बड़ा हुआ हूं। आप ने यह कहा – समझ नहीं पा रहा।" वह बोले, "यहां बंबई और फ़िल्म जगत में कुछ दिन रह कर समझ जाओगे।"

ऐसा ही हुआ भी। फ़िल्मों में चलने या न चलने का संबंध किसी के अच्छे होने या न होने से ही नहीं है। कुछ न कुछ तो किसी में होता ही है कि वह चलता है। पर उस की निजी सफलता और लोकप्रियता कई और बातों पर भी निर्भर होती है। हमारे किसान मेहनत तो करते ही हैं, पर फ़सल कैसी होगी यह मौसम आदि कई तत्वों पर तय होता है। इसलिए वह भाग्यवादी हो जाता है। कुछ वैसा ही फ़िल्म जगत में होता है। वहां के लोग भी दिन या वक़्त के अच्छे या बुरे होने में विश्वास करते हैं। तरह तरह की मन्नतें करते हैं।

चेतन आनंद और कैफ़ी आज़मी दो नेगेटिव बने एक 'हक़ीक़त'

मुझे मालूम है कि चेतन आनंद ने कैफ़ी आज़मी से कहा, हम दोनों के दिन अच्छे नहीं चल रहे। क्यों न हम दो नेगेटिव मिलकर एक